E-ISSN: 2664-603X
P-ISSN: 2664-6021
IJPSG 2025; 7(4): 50-54
www.journalofpoliticalscience.com
Received: 15-02-2025
Accepted: 19-03-2025

प्रियरंजन कुमार
शोधार्थी, स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग, टीएमबीयू, भागलपुर, बिहार, भारत

Corresponding Author:
प्रियरंजन कुमार
शोधार्थी, स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग, टीएमबीयू, भागलपुर, बिहार, भारत

वैश्वीकरण के युग में जनजातीय परिवर्तन और सशक्तिकरण: बिहार में जनजातीय समुदायों के विशेष संदर्भ के साथ एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

प्रियरंजन कुमार

DOI: https://doi.org/10.33545/26646021.2025.v7.i4a.484

सारांश
वैश्वीकरण दुनिया में विभिन्न लोगों, क्षेत्रों और देशों के बीच बढ़ती परस्पर निर्भरता को संदर्भित करता है क्योंकि सामाजिक और आर्थिक संबंध दुनिया भर में फैलते हैं। हालाँकि आर्थिक शक्तियाँ वैश्वीकरण का अभिन्न अंग हैं, लेकिन यह कहना गलत होगा कि वे अकेले ही इसका उत्पादन करते हैं। वैश्वीकरण एक बहुआयामी अवधारणा है जिसने समाज के हर वर्ग पर अपनी छाप छोड़ी है। इससे जनजातीय क्षेत्रों में राज्य और बाजार में अधिक घुसपैठ हुई है। जनजातियों पर वैश्वीकरण का सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव यह है कि इसने भूमि, वन और खनिजों के साथ प्राकृतिक पर्यावरण के साथ जनजातियों के संबंधों को बदल दिया है। ऐसा मुख्य रूप से राष्ट्रीय और क्षेत्रीय विकास की अनिवार्यताओं के कारण हुआ।

इस संदर्भ में, यह अध्ययन बिहार की जनजातियों के बीच सशक्तिकरण के विरोधाभास की जांच करने का प्रयास करता है, जहां जनजातियों के सशक्तिकरण की जड़ रहे राज्य ने भी उनके सशक्तिकरण के लिए कुछ प्रावधान किए हैं। अध्ययन माध्यमिक स्रोतों जैसे पुस्तकों, पत्रिकाओं, सरकारी रिपोर्टों आदि पर आधारित है। अध्ययन के प्रमुख निष्कर्षों से पता चलता है कि वैश्वीकरण ने जनजातीय समुदायों के जीवन में अपने विभिन्न रूपों में घुसपैठ की है और जनजातीय जीवन का परिवर्तन अभी भी क्षेत्रीय और राष्ट्रीय विकास के प्रमुख एजेंडे के तहत जारी है।

कुटशब्दः वैश्वीकरण, सशक्तिकरण, समाज, राष्ट्रीय विकास, बिहार

प्रस्तावना
पिछले तीन दशकों से, परिवर्तन की एक लहर चल रही है जिसने दुनिया भर के देशों को प्रभावित किया है। यह परिवर्तन ज्यादातर उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण (एलपीजी) द्वारा सुसज्जित किया गया है राष्ट्र राज्यों ने आयात और निर्यात के लिए अपनी सीमाएं खोल दी हैं। अर्थशास्त्रियों ने आर्थिक दृष्टि से इन परिवर्तनों का विश्लेषण किया है जो सबसे अधिक स्पष्ट है, लेकिन समाज के वैज्ञानिकों ने समाज के हर वर्ग पर इसके प्रभावों को महसूस किया है। वैश्वीकरण एक बहुआयामी अवधारणा है। कुछ लोगों के लिए, इसने जनजातियों की प्रकृति और प्राकृतिक निवास के लिए खतरा पैदा कर दिया है, लेकिन दूसरों के लिए यह जनजातियों सहित सभी के लिए विभिन्न अवसर लेकर आया है। दूसरे शब्दों में, वैश्वीकरण स्वदेशी संस्कृतियों की

स्वायत्तता के साथ-साथ स्वदेशी सशक्तिकरण के लिए एक अभूतपूर्व अवसर है।

हालाँकि, जनजातीय जीवन शैली प्रकृति के नियम द्वारा निर्धारित होती है। इस संदर्भ में, जनजातीय समुदायों पर वैश्वीकरण का प्रभाव बहुआयामी है क्योंकि वे ही हैं जो स्पष्ट रूप से न केवल भारत में बल्कि पूरी दुनिया में नकारात्मक रूप से प्रभावित हुए हैं। विकास के नाम पर, स्वदेशी लोगों के जीवन, आजीविका, संस्कृति और निवास स्थान को वैश्वीकरण के गर्म लोहे के तहत लाया गया है। यह देखा गया है कि निजी संपत्ति की अवधारणा और आदिवासी क्षेत्रों में बाजार के प्रवेश ने जनजातियों को अपने 'मूल' घर से अलग कर दिया। मुख्यधारा के लोगों के साथ बातचीत ने जनजातीय स्थान, संस्कृति, प्रथाओं की संस्कृति और अतिक्रमण को जन्म दिया।

इस तथ्य के बावजूद कि दुनिया एक ज्ञान आधारित क्षेत्र में बदल रही है, स्वतंत्रता के 75 वर्षों के बाद स्वदेशी समुदायों की निराशाजनक स्थिति, जिसमें मानव शक्ति, सामग्री, प्रौद्योगिकी और वित्तीय संसाधनों के मामले में भारी निवेश शामिल है, को विभिन्न कारणों से जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। ये आंतरिक, जंगली और उबड़-खाबड़ इलाके हैं, न्यूनतम संचार और परिवहन सुविधाओं ने इन समुदायों के परिवर्तन और विकास के कार्य को कठिन बना दिया है। जनजातीय समुदायों के बीच निरक्षरता और भाषा जैसी अन्य सांस्कृतिक बाधाएं भी आधुनिक विचारों और प्रौद्योगिकी की जनजातीय स्वीकृति के रास्ते में खड़ी हुई हैं। इस तथ्य के अलावा कि भारत के संविधान ने आदिवासी समुदायों को विभिन्न सुरक्षा प्रदान की है, वे भारत में सबसे पिछड़े और भेदभावपूर्ण समूह बने हुए हैं। भारत में जनजातीय लोगों के विस्थापन के मामलों में कई गुना वृद्धि हुई है।

आर्थिक विकास और आर्थिक विकास की आड़ में व्यावसायिक गतिविधियों ने आदिवासी समुदायों के पारंपरिक जीवन और संस्कृति में विदेशी ताकतों, संस्कृतियों और प्रभावों को लाया (बाबर, 2016) इस संदर्भ में, यह अध्ययन बिहार की जनजातियों के बीच सशक्तिकरण के विरोधाभास की जांच करने का प्रयास करता है, जहां जनजातियों के सशक्तिकरण की जड़ रहे राज्य ने भी उनके सशक्तिकरण के लिए कुछ प्रावधान किए हैं। उदाहरण के लिएः संविधान में पांचवीं और छठी अनुसूची के तहत उनके अधिकारों और लाभों की रक्षा के लिए कई प्रावधान हैं। मुख्यधारा के लोगों के साथ संस्कृति और बातचीत के रूप में ये अधिकार और लाभ इन स्वदेशी लोगों के लिए आर्थिक सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक विकास के लिए राष्ट्रीय एजेंडे के साथ सहसंबद्ध थे।

वैश्वीकरण का अवलोकन

वैश्वीकरण अर्थव्यवस्थाओं और समाजों के एकीकरण और विभिन्न संस्कृतियों के मिश्रण की प्रक्रिया है। दूसरे शब्दों में, वैश्वीकरण एक भौगोलिक सीमा से दूसरी भौगोलिक सीमा तक संसाधनों (मूर्त और अमूर्त) को जुटाने और वितरित करने की प्रक्रिया है। यह परस्पर निर्भरता की ओर ले जाता है। चूंकि वैश्वीकरण शब्द गढ़ा गया है, इसलिए इसका उपयोग मुख्य रूप से अर्थशास्त्र के संकीर्ण संदर्भ में किया जाता रहा है, लेकिन यह केवल अर्थशास्त्र तक ही सीमित नहीं है। सामाजिक और सांस्कृतिक एकीकरण और परस्पर मिश्रण वैश्वीकरण का एक महत्वपूर्ण पहलू और परिणाम है। सामाजिक दृष्टिकोण से, ऐसा लगता है कि वैश्वीकरण ने देशों के राष्ट्रीय जीवन जैसे जीवन शैली, दृष्टिकोण, पहचान, कार्य संस्कृति, पारिवारिक संरचना और मूल्यों और खाने की आदतों आदि को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित किया है। जहाँ तक संस्कृति का संबंध है, वैश्वीकरण का लोकप्रिय संस्कृति, त्योहारों, साहित्य, संगीत और सिनेमा और टेलीविजन आदि पर प्रभाव पड़ने की उम्मीद है। समान अवसर, लैंगिक असमानता, नशीली दवाओं और तस्करी और अन्य सामाजिक और राजनीतिक मूल्य जैसे पहलू कुछ अन्य महत्वपूर्ण पहलू हैं जो अर्थव्यवस्थाओं और समाजों के वैश्वीकरण की प्रक्रिया में प्रभावित होते हैं और भारत इन परिवर्तनों से अछूता नहीं है।

साहित्य की समीक्षा

एक मानवशास्त्रीय सर्वेक्षण के अनुसार, अब भारत में कुल 4,635 समुदाय पाए जाते हैं, जिनमें से कुल जनजातीय समुदाय 732 हैं (बाबर, 2016) हालांकि स्वदेशी लोगों का एक लंबा इतिहास है, लेकिन जनजातियों का समेकन और वर्गीकरण औपनिवेशिक शासन के दौरान ही शुरू हुआ। जनजाति शब्द बहुत सामान्य नहीं है। हालाँकि, एक अलग समुदाय के रूप में एक अंतर था, जिसमें प्रमुख समुदाय से अलग संस्कृति और भाषा थी, लेकिन जनजातियों का वर्णन करने के लिए कोई शब्द नहीं था। जनजाति की अवधारणा जाति के विपरीत एक सार्वभौमिक श्रेणी है, जो मूल रूप से ब्रिटिश उपनिवेशवाद से पहले भी दुनिया के विभिन्न हिस्सों में प्रचलित है। उन्हें 'पिछड़े', 'बर्बर', 'आदिम' और 'बर्बर' जैसी उनकी उल्लेखनीय विशेषताओं द्वारा परिभाषित किया गया था। वे सभी समाज जिनकी संस्कृतियाँ यूरोपीय लोगों से अलग थीं, उन्हें 'अन्य संस्कृतियों' के साथ 'अन्य समाज' माना

जाता था। बाद में, मानव विज्ञानियों ने तर्क दिया कि ये 'अन्य समाज' संबंध आधारित सामाजिक संगठन, श्रम के खराब विभाजन, आदिम जीवन शैली आदि द्वारा चिह्नित हैं (झाक्सा, 1999) भारत के संविधान के 73 संशोधनों ने स्थानीय निकायों में महिलाओं के लिए 33% आरक्षण निर्धारित किया है और इसे 2010 में 50% तक बढ़ा दिया गया है जो 2012 में लागू हुआ था, कोटा के भीतर एससी/एसटी महिलाओं के लिए आरक्षण क्षेत्र की आबादी के अनुपात में होगा। इससे आदिवासी महिलाओं को आगे आने और निर्णय लेने की प्रक्रिया का हिस्सा बनने का अवसर मिलता है। वे गाँव की परिधि से बाहर आए और प्रशासन का हिस्सा बने। वे समुदाय के अन्य लोगों को सशक्तिकरण के मार्ग पर आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित कर रहे हैं।

हालाँकि, समग्र रूप से वैश्वीकरण प्रक्रिया ने जनजातीय जीवन को सकारात्मक और नकारात्मक दोनों रूपों में अत्यधिक प्रभावित किया है। जनजातियों पर वैश्वीकरण के विभिन्न प्रभावों के बारे में अधिक चर्चा करने से पहले वैश्वीकरण की वास्तविक अवधारणा का एक विचार प्राप्त करें।

शोल्ट जे.ए (2008) के अनुसार वैश्वीकरण को पार-ग्रहों के प्रसार के रूप में समझा जाता है और हाल के दिनों में लोगों के बीच तेजी से अति-क्षेत्रीय संबंध भी हैं। उनके लिए, समकालीन ज्ञान और नीति को आगे बढ़ाने के लिए वैश्वीकरण की एक स्पष्ट और सटीक परिभाषा महत्वपूर्ण है।

हालाँकि, चौधरी (2008) के लिए वैश्वीकरण व्यापक रूप से उपयोग किए जाने वाले शब्दों में से एक है, लेकिन वर्तमान आर्थिक और राजनीतिक विमर्श में इसे कम परिभाषित किया गया है। कुछ विचारकों का तर्क है कि वैश्वीकरण शब्द को परिभाषित करने के बजाय इसके प्रभावों पर जोर देना बेहतर है। इस विश्लेषण के दौरान, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और पर्यावरणीय जैसे अन्य तत्वों की तुलना में आर्थिक प्रभाव केंद्रीय धुरी रहा है। इसके अलावा, सामाजिक वैज्ञानिक विशेष रूप से मानवविज्ञानी वैश्वीकरण को सामान्य रूप से समाज और विशेष रूप से आदिवासी समुदाय के लिए 'जोखिम और खतरे की लहर' मानते हैं। प्रारंभ में, भारत में भी, उदारीकरण और निजीकरण के साथ वैश्वीकरण की अवधारणा को एक-आयामी i.e. के रूप में देखा गया। केवल इसके आर्थिक पहलुओं पर जोर दिया गया। हालाँकि, वर्तमान में, वैश्वीकरण की बहुस्तरीय प्रक्रिया को सामने लाने के लिए बहसें हो रही हैं। तदनुसार, वैश्वीकरण शब्द कई रणनीतियों के संग्रह का परिणाम है जो दुनिया को अधिक से अधिक परस्पर निर्भरता और एकीकरण की ओर बदलने के लिए निर्देशित हैं। इसमें सामाजिक, आर्थिक और भौगोलिक बाधाओं को बदलने वाले नेटवर्क और गतिविधियों का निर्माण शामिल है।

वैश्वीकरण इस तरह से संबंध बनाने की कोशिश करता है कि भारत की घटनाओं को दूर से होने वाली घटनाओं से निर्धारित किया जा सके। दूसरे शब्दों में कहें तो वैश्वीकरण सार्वभौमिक रूप से लोगों, निगमों और सरकारों के बीच बातचीत और संघ का तरीका है। एंथनी गिडेन्स, डेविड हेल्ड और उनके सहयोगियों और रॉबर्टसन जैसे महत्वपूर्ण सामाजिक वैज्ञानिकों द्वारा वैश्वीकरण की परिभाषाओं को देखने से पता चलता है कि वे काफी समान पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करते हैं। गिडेनस ए. (1990) ने वैश्वीकरण को दुनिया भर में सामाजिक संबंधों के रूप में चित्रित किया, जहां स्थानीय घटनाएं दूर की घटनाओं से आकार लेती हैं।

हेल्ड डि. (1999) और उनके सहयोगियों ने लिखा कि वैश्वीकरण निकट और दूर के क्षेत्रों के परस्पर जुड़ाव का उदाहरण है, जिससे सामाजिक गतिविधि और शक्ति नेटवर्किंग में वृद्धि हुई है।

रॉबर्टसन (2000) ने उल्लेख किया कि वैश्वीकरण शब्द दुनिया के संपीड़न और एक इकाई के रूप में दुनिया की अधिक चेतना दोनों को दर्शाता है। इन परिभाषाओं से पता चलता है कि वैश्वीकरण के केंद्रीय पहलुओं में परस्पर संबंध, तीव्रता, समय-स्थान का अंतर, निरोध, अति-क्षेत्रीयता, समय-स्थान संपीड़न, दूरी पर कार्रवाई और परस्पर निर्भरता में तेजी लाना शामिल हैं। इस प्रकार, वैश्वीकरण के कई सिद्धांतकारों जैसे कि हार्वे डेविड (1995) द्वारा उठाया गया सामान्य विषय यह था कि कंप्यूटर जैसी आधुनिक तकनीकें सामाजिक संबंधों को तेज करती हैं और उन्हें अधिक लचीला बनाती हैं।

इन परिभाषाओं के माध्यम से यह माना जा सकता है कि समाजशास्त्री और मानवविज्ञानी वैश्वीकरण की तुलना में जनजातियों के बीच सामाजिक परिवर्तन के अंतिम परिणाम के रूप में देखते हैं। ज़ाक्सा ने जनजातियों के संबंध में जनजातीय पहचान के नुकसान की धारणा पर सवाल उठाया, न कि उनके अपने अधिकार में समुदायों के रूप में, बल्कि मुख्यधारा के समुदायों के साथ आत्मीयता या गैर-आत्मीयता के संदर्भ में (झाक्सा, 1999).

शोध विधि

इस शोध का महत्व कई दृष्टिकोणों के साथ इसके जुड़ाव में निहित है जैसे कि सबाल्टर्न परिप्रेक्ष्य, नव-मार्क्सवाद जो जनजातियों सहित अल्पसंख्यकों के हाशिए पर जाने और इस हाशिए पर जाने की प्रक्रिया में मौजूद अंतर्निहित संघर्ष के बारे में तर्क देता है। शोध

मुख्य रूप से माध्यमिक स्रोतों जैसे पुस्तकों, पत्रिकाओं, जनजातीय ग्रंथों, सरकार और विभिन्न एजेंसियों की रिपोर्टों, जनगणना के आंकड़ों, सर्वेक्षणों आदि पर आधारित है। अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य बिहार में जनजातीय समुदायों पर वैश्वीकरण के प्रभाव का पता लगाना और बिहार की जनजातियों के बीच सशक्तिकरण और सशक्तिकरण के विरोधाभास की जांच करना है। अध्ययन में जनजातीय कल्याण के लिए चल रही सरकारी योजनाओं के संदर्भ में राज्य की भूमिका का विश्लेषण करने का भी प्रयास किया गया है। एक तरह से, यह अध्ययन मुख्यधारा के समाजों के साथ जनजातीय समुदायों के बीच बातचीत और जनजातीय संस्कृति, आजीविका, शिक्षा और स्वास्थ्य पर इसके प्रभावों की जांच करने का एक प्रयास है। निम्नलिखित शोध प्रश्न उपर्युक्त उद्देश्यों से प्राप्त किए गए हैंः निम्नलिखित शोध प्रश्न उपर्युक्त उद्देश्यों से प्राप्त किए गए थेः

(क) स्वदेशी समुदाय वैश्वीकरण के विचार को कैसे समझते हैं और खुद को समायोजित करते हैं?

(ख) मुख्यधारा के समाज विशेष रूप से सरकार के लिए सशक्तिकरण का विचार जनजातियों से कैसे अलग है? (ग) भूमि और निजी संपत्ति के अतिक्रमण की प्रक्रिया ने जनजातियों को उनकी अपनी भूमि से कैसे अलग कर दिया है? (घ) मुख्यधारा के समाज के साथ संपर्क के कारण स्वदेशी समुदायों को किन चुनौतियों का सामना करना पड़ता है? (ङ) बढ़ते औद्योगीकरण और शहरीकरण के कारण जनजातीय समुदायों की आजीविका कैसे प्रभावित होती है? (च) प्रमुख समुदाय के साथ जनजातियों की इस बातचीत ने स्वास्थ्य, शिक्षा और जागरूकता के मामले में जनजातियों को कैसे लाभान्वित किया है?

विश्लेषण और निष्कर्ष

वैश्वीकरण और शहरीकरण और आधुनिकीकरण ने समाज के सामाजिक और सांस्कृतिक ताने-बाने में महत्वपूर्ण बदलाव लाए हैं। बिहार राज्य में जनजातीय संस्कृति के अतिक्रमण की घटना एक महत्वपूर्ण चिंता का विषय है। बिहार में संथाल, उरांव, मुंडा और गोंड जैसी कई स्वदेशी जनजातियों सहित विविध आबादी है। इन जनजातियों की एक अलग संस्कृति, भाषा और जीवन शैली है जिसे उनके अद्वितीय इतिहास, भूगोल और पर्यावरण ने आकार दिया है। इन प्रथाओं को पीढ़ी दर पीढ़ी पारित किया गया है और ये उनकी संस्कृति का एक अनिवार्य हिस्सा हैं। हालाँकि, आधुनिकीकरण की प्रक्रिया के कारण इन प्रथाओं में गिरावट आई है। इन समुदायों के कई युवा अपनी पारंपरिक प्रथाओं को छोड़ रहे हैं और आधुनिक प्रथाओं को अपना रहे हैं। उदाहरण के लिए, भागलपुर जिले के पीरपाइती ब्लॉक में, यह पाया गया कि आदिवासी समाज में 'चिकित्सा चिकित्सक' या 'चिकित्सा पुरुष' का विचार विलुप्त होने वाला है। जिस क्षेत्र में मुख्य रूप से मल पहाड़िया और सौरिया पहाड़िया जैसे विशेष रूप से कमजोर आदिवासी समूह (पीवीटीजी) जनजातियां रहती हैं, वे अपने आदिवासी चिकित्सा चिकित्सकों के पास जाने के बजाय सरकारी अस्पतालों या निजी क्लीनिकों में अपनी चिकित्सा सेवाओं का लाभ उठाते हैं। इस तरह, आधुनिकीकरण और शहरीकरण की प्रक्रिया ने उनके जीवन के तरीके, उनके संसाधनों और उनकी प्रथाओं को खतरे में डाल दिया है।

चिंता का एक अन्य क्षेत्र यह है कि शहरीकरण में वृद्धि के कारण वन क्षेत्र में गिरावट आई है। वन इन समुदायों के लिए एक आवश्यक संसाधन है, क्योंकि यह उन्हें भोजन, ईंधन और औषधीय पौधे प्रदान करता है। वन क्षेत्र के नुकसान ने इन समुदायों के लिए अपनी आजीविका को बनाए रखना मुश्किल बना दिया है। हालाँकि, स्थिति का विरोधाभास इस तथ्य में निहित है कि अनुसूचित जनजातियाँ और अन्य पारंपरिक वनवासी (वन अधिकारों की मान्यता अधिनियम) 2006 जैसी योजनाएं, जो वनों में रहने वाले आदिवासी समुदायों और अन्य पारंपरिक वनवासियों के वन संसाधनों के अधिकारों को मान्यता देती हैं, जिन पर ये समुदाय आजीविका, निवास और अन्य सामाजिक-सांस्कृतिक आवश्यकताओं सहित विभिन्न आवश्यकताओं के लिए निर्भर थे। यह वनों के साथ अनुसूचित जनजातियों के सहजीवी संबंधों को भी मान्यता देता है, जो वनों पर उनकी निर्भरता के साथ-साथ वनों के संरक्षण के संबंध में उनके पारंपरिक ज्ञान में परिलक्षित होता है। लेकिन, ऐसी कई सरकारी रिपोर्टें आई हैं जो दर्शाती हैं कि प्रभावित समुदायों की सहमति या भागीदारी के बिना, विभिन्न विकास परियोजनाओं के लिए आदिवासी भूमि और संसाधनों पर अतिक्रमण किया गया है।

ऐसा ही एक उदाहरण सरकार की कोसी नदी पर बांध बनाने की योजना है, जो राज्य के कई बाढ़ प्रभावित आदिवासी क्षेत्रों जैसे कि मधुबनी, सुपौल, अरारिया, पूर्णिया, कटिहार, माधेपुरा और भागलपुर से होकर गुजरती है। इस परियोजना की संभावित पर्यावरणीय और सामाजिक प्रभावों जैसे जैविक विविधता के नुकसान, वन संसाधन, भूमि अलगाव, आजीविका के नुकसान आदि के लिए आलोचना की गई है। इसके अतिरिक्त, ऐसी खबरें हैं कि बिहार सरकार गैर-आदिवासी व्यक्तियों और कंपनियों को अक्सर

धोखाधड़ी के माध्यम से या स्थानीय समुदायों की कीमत पर आदिवासी क्षेत्रों में भूमि अधिग्रहण करने की अनुमति देती है।

इसके कारण भागलपुर क्षेत्र में संथाल जनजातियों का व्यापक विस्थापन हुआ है। इससे आदिवासी समुदायों और गैर-आदिवासी समुदायों के बीच संघर्ष भी हुए हैं। इसके अलावा, सरकार पर शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और बुनियादी बुनियादी ढांचे तक पहुंच जैसी आदिवासी समुदायों की बुनियादी जरूरतों और कल्याण की उपेक्षा करके आदिवासी समूहों के साथ भेदभाव और हाशिए पर डालने का भी आरोप लगाया गया है।

चारों ओर वैश्वीकरण और आधुनिकता की प्रक्रिया होने के बावजूद, जनजातियाँ अलग-थलग रही हैं और इस प्रक्रिया में भाग लेने के लिए पर्याप्त सशक्त महसूस नहीं किया है (सिंह बी., 2007) इस संबंध में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर विभिन्न प्रकार के प्रवचन और प्रवृत्तियाँ चल रही हैं। कुछ लोग हैं जो वैश्वीकरण के सार को समझने की आवश्यकता के लिए तर्क देते हैं, लेकिन कुछ लोग हैं जो वैश्वीकरण की प्रक्रिया और आदिवासी समुदायों की अर्थव्यवस्था, समाज और संस्कृति पर इसके प्रभाव दोनों का विरोध करते हैं। वैश्वीकरण के सकारात्मक प्रभावों की अनदेखी करके, यह तर्क दिया गया है कि वैश्वीकरण ने आजीविका, सामुदायिक मानदंडों और वर्जनाओं, सांस्कृतिक विशेषताओं में घुसपैठ की है जो पूरी तरह से प्रकृति और प्राकृतिक संसाधनों जैसे भूमि, वनों, पानी और खनिजों पर निर्भर हैं।

जनजातियों पर वैश्वीकरण का सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव यह है कि इसने भूमि, वन और खनिजों के साथ प्राकृतिक पर्यावरण के साथ जनजातियों के संबंधों को बदल दिया है। ऐसा मुख्य रूप से राष्ट्रीय और क्षेत्रीय विकास की अनिवार्यताओं के कारण हुआ।

निष्कर्ष

अंत में, यह ध्यान दिया जा सकता है कि वैश्वीकरण के प्रभावों ने आधुनिकीकरण और विकास के नाम पर आदिवासी संस्कृति, भाषा, विश्वास प्रणाली, आजीविका संरचना आदि को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया है। उनकी निःशक्तिकरण प्रक्रिया उनके सशक्तिकरण के लिए एक एजेंडा बन गई। वास्तव में, वैश्वीकरण प्रक्रिया के बाद तेजी से राष्ट्रीय विकास लाने के उपायों, जैसे बुनियादी ढांचे का निर्माण, उद्योगों की स्थापना, बांधों और बिजली परियोजनाओं का निर्माण आदि को जनजातीय समाज के एकीकरण को प्राप्त करने के लिए महत्वपूर्ण कदमों के रूप में देखा गया। हालांकि, वैश्वीकरण के तहत बताए गए विकास के लाभ समाज के सबसे गरीब, सामाजिक रूप से पिछड़े और वंचित वर्गों तक नहीं पहुंचे हैं, बल्कि उन लोगों तक पहुंचे हैं जो पहले से ही शिक्षित, अच्छी तरह से बसे हुए, अच्छी तरह से पोषित और अच्छी तरह से पोषित हैं।

कुल मिलाकर, आदिवासी समुदायों और उनके संसाधनों के प्रति बिहार सरकार की कार्रवाई चिंता का विषय रही है और इन हाशिए पर पड़े समूहों के लिए अधिक ध्यान और समर्थन की आवश्यकता को उजागर करती है। सरकार के लिए यह महत्वपूर्ण है कि वह जनजातीय समुदायों के इन अधिकारों को पहचाने और उनका सम्मान करे, और उन्हें किसी भी निर्णय लेने की प्रक्रिया में शामिल करे जो उनकी भूमि, संसाधनों और आजीविका को प्रभावित कर सकती है। इस प्रकार यह अध्ययन राज्य में जनजातियों के विकास के लिए एक व्यापक गुणात्मक और नीति उन्मुख अनुसंधान लाने का एक प्रयास है।

संदर्भ

1. सिंह बी., "आर्थिक उदारीकरण और वैश्वीकरण के संदर्भ में जनजातीय परिदृश्य", इंडियन जर्नल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, 2007,53 (4) 759-766।
2. बाबर ए., "आर्थिक न्याय, सभी समावेशी विकास और सामाजिक परिवर्तन के संदर्भ में भारत में जनजातीय समुदायों पर वैश्वीकरण के प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन", जर्नल ऑफ पॉवर्टी, इन्वेस्टमेंट एंड डेवलपमेंट, 2016, खंड 21।
3. चौधरी के., "भारत में वैश्वीकरण, शासन सुधार और विकास", सेज पब्लिकेशंस इंडिया, 2007।
4. शोल्ट जे.ए., "वैश्वीकरण: एक आलोचनात्मक परिचय" मैकमिलन प्रेस लिमिटेड, 2008, खंड.31
5. हार्वे डेविड, "प्रश्न में वैश्वीकरण", मार्क्सवाद पर पुनर्विचार, 2008,8:4।
6. हेल्ड डि., "लोकतंत्र और वैश्वीकरण। विकल्प", 1999, 16(2)।
7. गिडेनस ए., "आधुनिकी और आत्म पहचान: देर आधुनिक युग में आत्मा और समाज", कैम्ब्रिज: पालिटी प्रेस, 1990.
8. रॉबर्टसन आर., "ग्लोबलिस्टियनः सोशल थ्योरी एंड ग्लोबल कल्चर", सेज पब्लिकेशंस लेफ्टिनेंट, 2000।
9. ज़ाक्सा वी., "राज्य, समाज और जनजातिः उत्तर-औपनिवेशिक भारत में मुद्दे", नई दिल्लीः पियर्सन एजुकेशन प्रेस, 2008
10. झाक्सा , "भारत के स्वदेशी लोगों के रूप में जनजातियाँ", आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक, 1999,34 (57), विशेष अंक।
11. झाक्सा., "ट्रांसफॉर्मेशन ऑफ ट्राइब्स इन इंडिया", इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 1999,

वॉल्यूम 34। मुद्दा नं. 24, विशेष मुद्दा।